REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 6 | MARCH - 2019

समकालीन हिंदी नाटको में पर्यावरण चिंतन

प्रा. गजानन पोलेनवार
तायवाडे महाविद्यालय, कोराडी, नागपुर.

प्रस्तावना :

भारतीय साहित्य में वेदों से लेकर प्राचीन एवं मध्यकालीन साहित्य में प्रकृति को अनेक रूपों में चित्रित किया गया है किन्तु आज हम साहित्य और पर्यावरण के अंतरूसंबंध की बात करते हैं तो मात्र प्रकृति चित्रण का संदर्भ नहीं देना है बल्कि पर्यावरण को क्षतिग्रस्त करने वाले मनुष्य को पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूक एवं सचेत करना है। आज का मनुष्य सभ्यता के सर्वश्रेष्ठ युग से गुजर रहा है किन्तु जिस पर्यावरण और प्रकृति से वह निर्मित हुआ है उसी निर्माणकर्ता को ही वह नष्ट कर रहा है। इसलिए निम्नलिखित पंक्तियाँ यहाँ सार्थक लगती है–

"सामने हो जब नंगी सदी
हर सभ्यता का दावा व्यर्थ है।
प्रकृति के दर्द को समझे बिना
आदमी का आदमी होना व्यर्थ है।"

प्रकृति और पर्यावरण आज इतने चर्चित शब्द बन चुके हैं कि समस्त मानवीय क्रियाकलापों को इनसे अलग करके देखा नहीं जा सकता। पर्यावरण की समस्या आज पूरे विश्व की समस्या बन चुकी हैं। प्रकृति के संतुलित परिवेश को प्रदूषण की व्यापकता ने बड़े स्तर पर प्रभावित किया है।

प्राकृतिक अवयवों को अनदेखा कर आज के तकनीकी युग में मशीन जन्य उपकरणों के साथ आगे बढ़ता मानव जीवन धीरे–धीरे प्रकृति विमुख होता जा रहा है। पर्यावरण चिंतन अपने आप में प्रकृति के प्रति इसी प्रकार की उपेक्षणीय स्थिति के लिए पैदा होता विचार है। प्राकृतिक परिवेश के ह्रास से उपजती सोचने लायक स्थिति ही अपने आप में पर्यावरण चिंतन को साकार करती है। जीवन की बहुत सारी भौतिक समस्याओं और अभावों से जूझने के साथ ही प्रकृति और पर्यावरण की समस्याओं से भी हमें रूबरू होना चाहिए क्योंकि प्रकृति ही अंततरू मानव जीवन का आधार है। पर्यावरण संरक्षण की मुहिम को साहित्य के माध्यम से भी प्रचारित किया जा सकता है और लोगों को प्रकृति एवं पर्यावरण के प्रति जागरूक, सचेत, एवं उत्तरदायित्व पूर्ण बनाया जा सकता है।साहित्य,समाज और पर्यावरण–चिंतन इसी रूप में संबद्ध है। साहित्यिक स्वर में नाटक की भूमिका अपनी जीवंतता के कारण अधिक प्रखर साबित होती है। पर्यावरण–चिंतन अपने आप मैं पर्यावरण संरक्षण की भावना से प्रेरित है जो हमें विभिन्न स्तरों पर ह्रास होते पर्यावरण संरक्षण के लिए सचेत करता है। जहाँ तक नाटकीय संप्रेषण और पर्यावरण–चिंतन का प्रश्न है साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा नाटक व्यापक समूह–समाज को एक साथ लेकर चलने वाली विधा है इसलिए जीवन की अन्य समस्याओं के साथ–साथ प्रकृति और पर्यावरण की समस्याओं को अभिव्यक्त करने के लिए नाटक एक सशक्त विधा है।

समकालीन हिंदी नाटककार प्रकृति और पर्यावरण से नैसर्गिक तौर पर एक सजग रचनाकार के रूप मैं अवश्य जुड़ा हुआ है। औद्योगीकरण के प्रचलन को लेकर भीसमकालीन हिंदी नाटककार ने सवाल–जवाब खड़े किए हैं तो भौतिक विकास की गति बढ़ने से बदलती जन मानसिकतापर अंकुश लगाने के साथ–साथ प्रकृति और पर्यावरण के प्रति उसके दायित्वपूर्ण संबंध का एहसास भी जगाया है। समकालीन हिंदी नाटकों मैं अभियक्त पर्यावरण– चिंतन के संदर्भ मैं 'अमित सिंह' ने कहा है– "नाटक जैसी साहित्य विधा मैं पर्यावरण की अगुआई को देखकर हिंदी नाट्य चेतना के अद्यतन होने का प्रमाण तो मिलता ही है नाटककार के रचनाकर्म से साहित्य मैं पर्यावरण की मुहिम को जगह देते हुये पर्यावरण जागरूकता की बात को उठाना प्रकृति के प्रति नाटककार के विशेष लगाव और दायित्वबोध का परिचयाक भी है।"[१] 'सपना मेरा यही सखी', 'विज्ञान नाटक','नया मन्वंतर','चिमनी चोगा','चिपको नारी','कोयला चला हंस की चाल','दरिंदे' आदि समकालीन हिंदी नाटकों में पर्यावरण–चिंतन के स्तर पर जल प्रदूषण से बाढ़एवं उपजती अन्य बीमारियों,वायु प्रदूषण से बिघड़ता पर्यावरण संतुलन, भूमि प्रदूषण से प्रभावित होता फसलचक्र, पवित्र नदियों का बिघड़ता सौंदर्य, वन–विनाश, वृक्ष–कटाई आदि पर्यावरण और प्रकृति से संबधित समस्याओं को गहरी संवेदना के स्तर पर अभिव्यक्त किया गया है।

पर्यावरण के बिघड़ते संतुलन के कारण जल स्त्रोतों के सिमटते जाने की व्यापक समस्या को लेकर राजेश जोशीअपने 'सपना मेरा यही सखी' इस नाटक में कहते हैं–

"पहले चार कदम पर थी नदी
अब चार कोस तक नहीं उसका पता
जलती धरती को नांगती
सिर पर खाली गड़ा लिए
दूर–दूर तक भटकते हैं पांव"[२]

गंगा, यमुना और कावेरी आदि जैसी पवित्र नदियों का बिघड़ता सौंदर्य अपने आप मैं एक पर्यावरणीय चुनौती है। जल स्त्रोतों के रूप मैं नदियों के बहते, कल–कल करते पानी को हमारे देश में पारंपरिक रूप मैं पूज्य माना गया है। सांस्कृतिक विरासत के धनी भारत जैसे देश मैं नदियों के पवित्र जल का दूषित होना और नदी जल स्त्रोतों का सूख जाना भौतिक स्तर पर उभरते जल संकट को ही नहीं बल्कि मानसिक स्तर पर भी भारतीय मन की संवेदनशीलता को क्षुब्ध करती है। डॉ०अज्ञात ने अपने 'विज्ञान नाटक' मैं कारखानिया नामक पात्र के माध्यम से कारखाने के अपशिष्टों को नदी जल स्त्रोतों मैं बहाकर उसे विषैले बना देने की बात कही है, जिसमें नाटककार ने नदी के बिघड़ते सौंदर्य और जल प्रदूषण पर चिंता प्रकट की है– "कारखानीया– मैं कारखाने की बदबू और रसायन लिए बेकाम भागता कारखानीया और ये मेरी दुश्मन नदी रानी,अब मरजाएगी तेरी नानी। कारखाने ने मुझे भेजा है बहादुर और विषैले पानी के रूप मैं। मैंने गाँव के गाँव के उजाड़ दिये। मेरे दोस्त कारखानेने फ्लोराइड खूब अधिक मात्रा मैं नदियों मैं बहा दिया जिससे दो करोड़ से ज्यादा लोग बीमार हो गये। हम जहर घोल रहे है जल मैं।"[३]

पंच प्राकृतिक तत्वों मैं वायु भी एक महत्वपूर्ण अवयव है। प्रातरूकालीन वायु को प्राणवायु भी कहा जाता है। किंतु वर्तमान युग मैं फ्याक्ट्रीयों से निकलते धूयैं,पेट्रोल, डिझेल के कारण वायू–प्रदूषण दिन–भ–दिन बढ़ता जा रहा है। वातावरण में ऑक्सिजन की निरंतर कम होती मात्र समकालीन हिंदी नाटककार के लिए पर्यावरणीय चिंतन का विषय है जो 'चित्तरंजीत' के नाटक 'नया मन्वंतर' में अभिव्यक्त हुआ है। नाटककार ब्रहस्पति नामक पात्र के माध्यम से अपनी पर्यावरणीय चिंता को प्रकट करते हुये कहते हैं– "जिसने प्रकृति के संसाधनों को लूटकर मानव को प्राणवायु देनेवाले जंगलों को काटकर, विषैली धुआँ छोड़नेवाली फ्याक्ट्रियां चलाकर, सड़कों पर पेट्रोल और डीजल से चलनेवाली वाहनों को धुंधवाती भीड़ जुटाकर, आकाश में पंछियों की तरह वायुयान उड़ाकर और अणुबम जैसी विनाशकारी अस्त्र–शस्त्र बनाकर घातक प्रदूषण फैलाया था और उसी से पृथ्वी माँ को जलाकर राख किया था।"[४]

जमीन प्रत्येक वस्तु को टिके रहने का आधार प्रदान करती है। कृषि पैदावार के लिये प्रयुक्त किए जानेवाले रसायनिक खादों एवं किटकनाशकों के प्रयोग से भूमि की उपजाऊ शक्ति नष्ट होती जा रही है। समकालीन हिंदी नाटकों में मिट्टी की नैसर्गिक मूल्यवत्ता का अंकन ही नहीं बल्कि उपरोक्त कारणों से होने वाले

भूमि–प्रदूषण के प्रति चिंता भी प्रकट हुई है। 'चिमनी चोगा' नाटक में कोयला खदान से संदर्भित भूमि–प्रदूषण के बारे में राजेश जैन कहते हैं– "हम खदान के एरिया वाले हैं। वहाँ जमीन के अंदर कोयला धधक रहा है। सैंकड़ों सालों से आग लगी है– धरती के अंदर ही अंदर कैंसर सी फैली आग। घरों के नीचे तक आ गयी है– पता नहीं कहाँ जहरीली गैस हो।"[५]

वृक्ष–कटाई की समस्या भौतिक प्रदूषण के रूप में पर्यावरणीय चुनौति का मुददा है जिसके कारण चिपको आंदोलन जैसे कृत्य हुये हैं। वृक्ष बचाने की मुहिम में 'सुंदरलाल बहुगुणा' के नेतृत्व में हुये आंदोलन को केंद्र करके भी हिंदी नाटकों की रचना हुई है जिनमें संपूर्ण नाट्य चेतना वृक्षों के संरक्षण हेतु ही समर्पित है। 'चंद्र मोहन' का नाटक 'चिपको नारी'वृक्ष संरक्षण के लिये हुये चिपको आंदोलन को ही आधार बनाकर लिखा गया है। इस नाटक में वृक्षों को काटे जाने के लिये सरकारी तंत्र और मानव की मुनाफाखोर प्रवृत्ति को जिम्मेदार ठहराते हुये वृक्षों के काटने से पैदा होती प्राकृतिक विपदाओं के संदर्भ में नाटककार अपने पात्र के माध्यम से कहते हैं– "अपराध तो प्रकृति के खिलाफ सरकार कर रही है। दूसरा अपराध वे जंगल माफियाँ करेंगे जो हजारों पेड़ों पर हाथ साफ कर जंगल को नंगा कर ऐसी की तैसी करेंगे– जंगल के पेड़ कट गये तो लकड़ी व घास–पात का क्या होगा? जमीन नंगी होगी तो प्राकृतिक विपदा आयेगी,भूकंप आयेगा, पहाड़ों की मिट्टी खिसकेगी, आने जाने के रास्ते बंद होंगे।"[६] वन–विनाश की चर्चा करते हुये राजेश जोशी अपने नाटक 'सपना मेरा यही सखी' में वृक्षों के प्रति अपनी गहन संवेदना को स्त्री स्वर के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं–

"उन्होंने छीन लिये, छीन लिये मुझसे मेरे वृक्ष
नीम छीन लिया, बड़ छीन लिया, छीन लिया सागौन
उन्होंने मुझसे मेरे वृक्ष छीन लिये।"७

समकालीन हिंदी नाटककार मानव समूह से पर्यावरण संरक्षण की अपील भी करता दिखाई देता है। राजेश जैन अपने नाटक 'कोयला चला हंस की चाल' में मनोहर नामक पात्र के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण का संदेश देते हैं– "जिस तरह दलितों पर अत्याचार के खिलाफ आवाज उठती है, उसी तरह पर्यावरण की सुरक्षा भी होनी चाहिये। सबको देखना है कि पर्यावरण पर ज्यादतियां न हों– उसका शोषण न किया जाये।"८

जनसंख्या वृद्धि का प्रश्न भी पर्यावरण चिंतन का अहम विषय बन चूका है क्योंकि किसी भी राष्ट्र की उन्नति एवं खुशहाली के लिये जनसंख्या का नियंत्रित होना आवश्यक होता है। समकालीन हिंदी नाटकों में जनसंख्या वृद्धि और उसके पर्यावरण–प्रतिकूल प्रभाव का चित्रण कई स्तरों पर हुआ है। इन नाटकों में जनसंख्या से भौतिक संसाधनों की बढ़ती माँग और उसके लिये होने वाले पर्यावरणीय शोषण की समस्या को उठाया गया है। हमीदुल्ला अपने नाटक 'दरिंदे' में बढ़ती जनसंख्या के कारण कटते जंगलों के रूप में पर्यावरणीय शोषण की समस्या के संदर्भ में कहते हैं– "आबादी तेजी से बढ़ रही है। पचपन करोड़ ! छप्पन करोड़ ! साठ करोड़ ! अस्सी करोड़ ! नब्बे करोड़ ! एक अरब ! दो अरब! तीन अरब ! चार अरब ! पाँच अरब ! संसार के सारे जंगल तेजी से काटे जा रहे हैं इतनी तेजी से कि कुछ ही दिनों में जंगल का नामोनिशान नहीं रहेगा।"९

निष्कर्ष रूप में प्रकृति और पर्यावरण से सरोकारित समकालीन हिंदी नाटकों में पर्यावरण संरक्षण के प्रति जो संवेदना प्रकट हुई वह निश्चित ही एक स्तर पर सुकून पहुंचाती है, हमें प्रकृति के साथ जोड़ने में सफल होती है और संभावित पर्यावरणीय खतरों के प्रति सचेत भी करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1) हिंदी नाटक :– नयी परख– संपा. रमेश गौतम , पृष्ठ क्रमांक– ५४६–५४७
2) सपना मेरा यही सखी :– राजेश जोशी , पृष्ठ क्रमांक– ०८ , ०७
3) विज्ञान नाटक :– डॉ.अज्ञात , पृष्ठ क्रमांक– ७६
4) नया मन्वंतर :– चित्तरंजीत , पृष्ठ क्रमांक– ८३
5) चिमनी चोगा :– चंद्रमोहन , पृष्ठ क्रमांक– २२
6) चिपको नारी :– राजेश जैन , पृष्ठ क्रमांक– ४५

7) कोयला चला हंस की चाल :– राजेश जैन , पृष्ठ क्रमांक– ४५
8) दरिंदे :– हमीदुल्ला , पृष्ठ क्रमांक– ३५

LBP PUBLICATION